में पाए जाने वाले घोड़े की नाल के आकार से बड़ा हैं जिससे यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता हैं कि राजाओं तथा उनके रक्षकों द्वारा उपयोग में लाये जाने वाले घोड़े वर्तमान की तुलना में ज्यादा बलिष्ठ तथा आकार में बड़े रहे होंगे।

मितावली से प्राप्त मूतियाँ शुंग तथा कुषाण काल (प्रथम शताब्दी ई.पू. से तृतीय शताब्दी ई.) की हैं। ये मूर्तियाँ मानव आकार की तथा दीर्घकाय हैं। ये प्रतिमाएं वस्त्र तथा आभूषण युक्त हैं। इनमें से अधिकांश मूर्तियाँ अधूरी हैं तथा निर्माण के विभिन्न चरणों को प्रदर्शित करती हैं। इस काल से मुख्यतः हरिहर, बलराम तथा कार्तिकेय की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं।

नरेसर, बटेसर, खेराट, अटेर, रन्नौद, सुरवाया तथा पढ़ावली से प्राप्त मूर्तियाँ गुर्जर–प्रतिहार काल (8वीं शताब्दी ई. से 10 वीं शताब्दी ई.) की हैं। ये मूर्तियाँ गुप्तोत्तर काल की मूर्ति निर्माण कला, तकनीक तथा विभिन्न विषयों को दर्शाती हैं। गुप्तकाल में मूर्ति निर्माण अपनी पराकाष्ठा पर था जिसकी पुनरावृत्ति इस काल में हुई हैं। तदानुसार ये प्रतिमाएँ पतली, कमनीय, आकर्षक तथा दैवीय प्रतीत होती हैं। स्त्री आकृतियों के निर्माण में मूर्तिकार ने शारीरिक कमनीयता, कोमलता तथा विषय परायणता पर बल दिया हैं। इस काल की मुख्य प्रतिमाओं में नटराज, एकमुख शिवलिंग, महापशुपतिनाथ शिवलिंग, सप्तमातृकाएँ एवं प्रवेशद्वार पर गंगा–यमुना की आकृतियाँ उल्लेखनीय हैं।

सिहोंनिया से प्राप्त कच्छपघात कालीन मूर्तियाँ भी कला परम्परा के निर्वाह में गुप्तकालीन मूर्तियों से पीछे नहीं हैं। ये मूर्तियाँ वास्तविक, गतिशील तथा आकर्षक हैं। इन मूर्तियों में अष्टदिक्पाल, सुरासुंदरी, नृत्यप्रतिमा, विद्याधर तथा मिथुन आकृतियाँ हैं। सिंह के अलावा अश्व, वराह, सुक तथा नर–व्याल की मूर्तियॉ भी सिहोनिया से मिली हैं जो कि कच्छपघात शासकों की शक्ति का प्रतीक हैं।

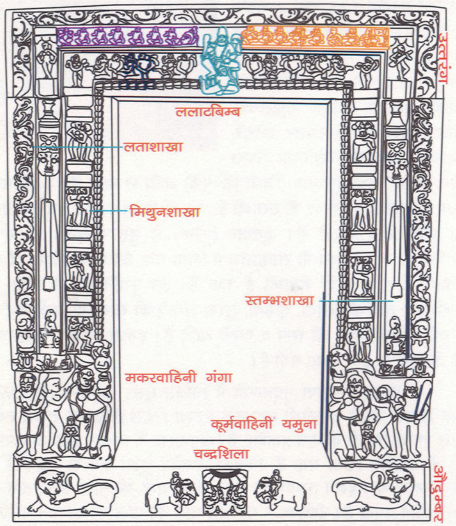

मंदिर का प्रवेश द्वार

अटेर से भदौरिया शासकों की मूर्तियाँ (17वीं शताब्दी ई.) प्राप्त हुई हैं। संग्रहालय में प्रदर्शित भदौरिया शासकों की पाषाण प्रतिमाओं को सजीवता प्रदान करने के लिए चमकदार पॉलिश तथा रंगो का प्रयोग किया गया हैं। एक प्रतिमा पर लाल तथा हरे रंग के साक्ष्य भी हैं।

इस संग्रहालय में जहाँ एक ओर 3000 साल पुराने पुरावशेष हैं वहीं ब्राम्हण धर्म के मुख्य मतों जैसे वैष्णव, शैव, शाक्त, तथा सौर सम्प्रदाय के अलावा जैन और बौद्ध धर्म की भी प्रतिमाएं संग्रहित हैं। संग्रहालय की मुक्त आकाश वीथिका में मूर्तियों तथा मंदिरो के अवशेषों (द्वार शाखा, स्तम्भ, सिरदल, शिवलिंग, सतीस्तम्भ आदि) का प्रदर्शन किया गया हैं।

मंदिर का प्रवेश द्वार :-

गर्भगृह के द्वार में प्रयुक्त वास्तुशास्त्र, साहित्य एंव परम्परागत तरीके से उत्कीर्ण कलाकृतियों का विवरण लोक रूचि एवं जानकारी हेतु चित्र द्वारा बताया गया हैं।

मंदिर का द्वार त्रिशाखा (मिथुन, स्तम्भ तथा लता) युक्त है। द्वार शाखा के निचले भाग मे गंगा तथा यमुना को हाथों में कलश लिए हुए अपने वाहनों क्रमशः मकर तथा कछुए के साथ दर्शाया गया हैं।

ललाटबिम्ब में ललितासन मुद्रा में चतुर्भुजी विष्णु गरूड़ासीन हैं। उत्तरंग दो भागों में विभाजित हैं। निचले भाग में उड़ते हुए मालाधारी विद्याधर बने हुए हैं तथा ऊपरी भाग में एक तरफ नव ग्रह (सूर्य, चन्द्र{सोम}, मंगल, बुध, गुरू, शुक्र, शनि, राहु व केतु) तथा दूसरी तरफ सप्तमातृका (चामुण्डा, इंद्राणी, वाराही, वैष्णवी, कौमारी, माहेश्वरी तथा ब्रह्माणी) का अंकन गणेश तथा वीर भद्र के साथ किया गया हैं।

प्रवेश द्वार के रेखांकित औदुम्बर भाग में चंद्रशिला तथा दोनों ओर हाथी व सिंह बने हैं।

गरूड़ासीन विष्णु

नवग्रह पटल

सप्तमातृका पटल

संग्रहालय अवलोकन का समय

शुक्रवार को छोड़कर

प्रतिदिन प्रातः 9 बजे से सायं : 5 बजे तक

प्रवेश शुल्क

रू. 5 प्रति व्यक्ति

15 वर्ष से कम आयु वाले बच्चो के लिए निःशुल्क प्रवेश

संग्रहालय मे निषिद्ध

फोटोग्राफी, धूम्रपान, शोरगुल, मोबाईल का प्रयोग, बैग, खाद्य सामग्री, विस्फोटक एंव शस्त्र आदि

सुझाव एवं अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क सूत्र

सहायक अधीक्षण पुरातत्वविद्

भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण

पुरातत्व संग्रहालय, ग्वालियर किला,

ग्वालियर पिन –474008 (म.प्र.)

दूरभाष : 0751–2481259, फैक्स : 0751–2481259

ई–मेल : museumgwaliorfortasi@gmail.com

सम्बंधित वेबसाइट www.asibhopal.nic.in ; www.asi.nic.in

हमारी गौरवशाली धरोहर को भावी पीढ़ी तक पहुँचाना हमारा नैतिक कर्तव्य है

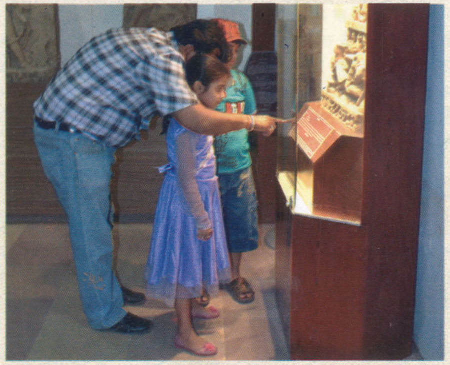

अनुवाद : **सन्ध्या द्विवेदी**, चित्र एवं छायाचित्र : **मेनुअल जोसफ**

पुरातत्व संग्रहालय ग्वालियर

इतिहास

ग्वालियर शब्द की उत्पत्ति ग्वालप नामक साधू के नाम से मानी जाती हैं, जिन्होंने कुतवार (प्राचीन कुंतलपुर) के राजा सूरज सेन को कुष्ठ रोग से मुक्ति दिलाई थी। तदानुसार इस स्थल को गोपागिरि या गोपाद्री तथा कालान्तर में ग्वालियर के नाम से जाना गया। इन्हीं सिद्ध बाबा की गुफा किले के पूर्व में गणेश द्वार तथा लक्ष्मण द्वार के बीच स्थित हैं।

ग्वालियर क्षेत्र से मानव की गतिविधियों के प्रमाण प्रागैतिहासिक काल से ही प्राप्त होने लगते हैं। ग्वालियर से 3 कि.मी. पश्चिम में स्थित गुप्तेश्वर नामक स्थान से पाषाण काल के औजार प्राप्त होने से इस क्षेत्र की प्राचीनता हजारों वर्ष पूर्व प्रागैतिहासिक काल तक जाती हैं। पूर्व–ऐतिहासिक युग से सम्बन्धित ईंटों की संरचनाएँ, मृण्मूर्तियाँ, धातु की वस्तुएँ तथा कई प्रकार के मृद्भाण्ड (जिनकी तिथि 600 ई. पू. से 600 ई. के बीच है) की प्राप्ति यह प्रमाणित करती है कि मौर्य, शुंग, कुषाण, नाग तथा गुप्त काल में भी यह क्षेत्र मानवीय गतिविधियों का केन्द्र रहा है।

ग्वालियर के समीप गुर्जरा (दतिया) से मौर्य शासक अशोक (273–232 ई. पू) का अभिलेख मिला है जिसमें पहली बार राजा अशोक का नाम प्राप्त हुआ है। प्रथम शताब्दी ई. में इस क्षेत्र पर नाग शासकों का अधिकार था। नाग वर्तमान पद्म पवाया (प्राचीन पद्मावती) से शासन करते थे। कालांतर में कुषाण शासकों ने नागों को पराजित कर अपने क्षत्रपों (राज्यपालों) को यहाँ नियुक्त किया लेकिन 300 ई. में ये नागों द्वारा विस्थापित कर दिये गये। अतः यह क्षेत्र एक बार पुनः तीसरी–चौथी शताब्दी ई. में नागों के अधिकार में आ गया। तत्पश्चात गुप्त शासकों ने पाँचवी शताब्दी के अंतिम चतुर्थांश तक इस क्षेत्र में राज्य किया। ग्वालियर दुर्ग की प्राचीनता का पहला लिखित ऐतिहासिक साक्ष्य हूण राजा मिहिरकुल का छठवीं शती ई. का प्रस्तर अभिलेख हैं। आठवी शताब्दी ई. में गुर्जर–प्रतिहार वंश अस्तित्व में आया। किले के लक्ष्मण द्वार पर स्थित एकाश्मक चतुर्भुज मंदिर के गर्भगृह एंव मण्डप की दीवारों पर प्रतिहार राजा मिहिरभोज का इसी मंदिर के निर्माण से सम्बन्धित दो लेख उत्कीर्ण हैं। गर्भगृह में उत्कीर्ण संस्कृत भाषा के अभिलेख में शून्य (0) का अंकन है जो कि इस प्रदेश में प्राप्त प्रस्तर अभिलेखों में पहली बार दृष्टिगत हुआ हैं। 950 ई. में इस किले पर कच्छपघात वंश के राजाओं का अधिकार हो गया।

तेरहवीं शताब्दी में दिल्ली के सिंहासन पर गुलाम वंश का अधिकार हुआ। ग्वालियर दुर्ग भी इस राजनैतिक घटना से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। मुहम्मद गौरी के सूबेदार (जनरल) कुतुबुद्दीन ऐबक ने इस किले पर अधिकार कर लिया तथा अपने दामाद इल्तुतमिश को यहाँ का अमीर नियुक्त किया। 1265 ई. में दिल्ली के तत्कालीन सुल्तान बलबन ने ग्वालियर दुर्ग पर अधिकार कर लिया।

मुस्लिम इतिहासकार फरिश्ता के अनुसार 1295 ई. में जलालुद्दीन फिरोजशाह खिलजी ने किले को अपने अधीन कर इसका उपयोग एक प्रांतीय कारागार की तरह किया। 1398 ई. में इस सुप्रसिद्ध ग्वालियर किले पर तोमर राजपूतों का आधिपत्य हुआ। 1424 ई. में तोमर शासक डूंगर सिंह सिंहासन पर बैठा जिसको इस किले की ढलानों पर जैन मूर्तियों को उत्कीर्ण कराने के लिए जाना जाता हैं।

तोमर राजाओं में सबसे शक्तिशाली राजा मानसिंह ने इस किले को स्वदेशी तरीके से सजाया। 1486 ई. से 1516 ई. तक का उनका शासनकाल इस राज्य की सांस्कृतिक तथा राजनैतिक गतिविधियों का उन्नत काल था। राजा मानसिंह संगीतकारों के महान संरक्षक थे। उनके दरबार मे उपस्थित संगीतकारों से संगीत का सुप्रसिद्ध ग्वालियर घराना अस्तित्व में आया तथा उनके अधीन पुष्पित एवं पल्लवित हुआ। आइने–अकबरी में वर्णित अकबर के दरबार के 36 संगीतज्ञों में से 16 यहीं से उपहार स्वरूप भेजे गये थे। तानसेन इनमें सबसे प्रसिद्ध संगीतज्ञ थे।

राजा मानसिंह का संगीत के प्रति लगाव अपनी प्रिय गूजरी रानी, मृगनयनी के कारण हुआ, जिसके लिए राजा ने सुप्रसिद्ध गूजरी महल का निर्माण करवाया था। 1523 ई. में लोधी वंश के अंतिम शासक इब्राहिम लोदी ने मानसिहं के पुत्र विक्रमादित्य को परास्त कर यह दुर्ग अपने अधीन कर लिया। 1526 ई. में पानीपत के प्रथम युद्ध में मुगल शासक बाबर से पराजित होने के बाद लोधी वंश समाप्त हो गया। बाबर ने अपने पुत्र हुमायूँ को ग्वालियर जो कि उस समय तोमरों के अधीन था, को जीतने के लिए भेजा। इस अभियान में हुमायूँ को सफलता मिली लेकिन उसने तोमरों को मुगल शासन के अधीन कर उन्हें यहाँ राज्य करने दिया, कालान्तर में तोमरों ने अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी। 1559 ई. में मुगल बादशाह अकबर ने तोमर राजा रामसिंह को युद्ध में पराजित कर यह दुर्ग अपने अधिकार मे कर लिया। इस प्रकार यह किला पुनः मुगलों के अधिकार मे आ गया। मुगलों ने ग्वालियर किले का प्रयोग एक प्रांतीय कारागार के रूप में किया। 1754 से 1781 ई. के बीच यह दुर्ग मुगलों के अधिकार से निकल कर क्रमशः गोहद के राणा, मराठों तथा अंत में अंग्रेजों के अधिकार में आ गया। 1782 में सल्वाई की संधि द्वारा ग्वालियर दुर्ग पर सिंधिया वंश का अधिकार हो गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1948 में ग्वालियर मध्य भारत के अंतर्गत शामिल कर लिया गया।

किला :-

ग्वालियर स्थित यह किला बलुआ पत्थर (सेंड स्टोन) की 100 मीटर ऊँची चट्टान पर स्थित हैं। उत्तर भारत में स्थित सभी किलों में अद्वितीय इस किले की लम्बाई उत्तर से दक्षिण लगभग 2.5 कि.मी. तथा चौडाई पूर्व से पश्चिम 200 मीटर से 725 मीटर है। पूर्व की तरफ चट्टान को काट कर बनाए गये ढाल पर स्थित सुरक्षा दीवार की लम्बी पंक्तियों की कतार राजा मानसिंह के प्रसिद्ध नक्काशीदार गुम्बद तथा मीनार युक्त मानमहल द्वारा अवरूध हुई हैं। इसकी विपरीत दिशा में उरवाई घाटी को और ऊँचा करके उसे टेढ़ी–मेढ़ी तथा आरीदार सछिद्र बुर्ज युक्त सुरक्षादीवार से सजाया गया हैं, जिसमें बाहर की ओर जाने वाले दो रास्तों पर कई द्वार स्थित हैं। किले पर निर्मित महलों में करन मंदिर, मानमंदिर, विकम मंदिर, जहाँगीर महल, शाहजहाँ महल तथा किले की तलहटी में स्थित गूजरी महल मुख्य हैं। यहॉ कई मंदिरों का भी निर्माण किया गया जिसमें सबसे प्रचीन सूर्य देव मंदिर का निर्माण हूण शासक मिहिरकुल (525 ई.) के मात्रचेट ने इसके शासन काल के 15 वें वर्ष में करवाया था। अन्य मंदिरों में ग्वालिप मंदिर, चतुर्भुज मंदिर (876 ई.), तेली का मंदिर (750 ई.) तथा सास–बहू मंदिर (1093 ई.) प्रमुख हैं। दारा शिकोह के बडे बेटे सुलेमान शिकोह तथा औरंगजेब के पुत्र शहजादा मुहम्मद मुअज्जम ने किले की तलहटी में मकबरों तथा मस्जिदों का निर्माण करवाया था। इसमें जामा मस्जिद, मोती मस्जिद, खान दौलत खान का मकबरा, मोहम्मद गौस का मकबरा, तथा तानसेन का मकबरा प्रमुख हैं।

जहाँगीर के शासन काल में सिक्ख गुरू हरगोविन्द सिंह को यहाँ दो वर्ष के लिए कैद करके रखा गया था लेकिन बाद में उनको मुक्त कर दिया गया था। उन्हीं के प्रयासों से 52 अन्य हिंदू राजाओं को भी बादशाह ने आज़ाद कर दिया था। अपने छठवें गुरू के जीवन से सम्बन्धित इस महत्वपूर्ण घटना के स्मरणार्थ किले पर एक गुरूद्वारा, दाता बंदी छोड़ का निर्माण सिक्ख समुदाय द्वारा करवाया गया। इसके अलावा तालाब, बावडी, जलकुण्ड तथा कुंए भी इस किले की सुंदरता को बढ़ाते हैं। इन्हीं विशेषताओं के कारण ग्वालियर दुर्ग को 'किलो का रत्न' तथा 'भारत का जिब्राल्टर' कहा गया हैं।

पुरातत्व संग्रहालय

ग्वालियर अपने किले के लिए विशेष प्रसिद्ध हैं, ग्वालियर तथा उसके आस–पास से प्राप्त मूर्तियों तथा अन्य पुरावशेषों को जनमानस के अवलोकन एवं पुरानिधियों की देखभाल के लिए इस किले के एक भवन को पुरातत्व संग्रहालय के रूप में स्थापित किया गया हैं।

पुरातत्व संग्रहालय, ग्वालियर किला के हाथीपौर द्वार के सामने स्थित हैं। इस संग्रहालय को जनमानस के अवलोकन के लिए 02 अक्टूबर 1993 के दिन विधिवत खोला गया। वर्तमान संग्रहालय का यह भवन ब्रिटिश शासन काल के दौरान अंग्रेजों का अस्पताल (चिकित्सालय) तथा कारागार था।

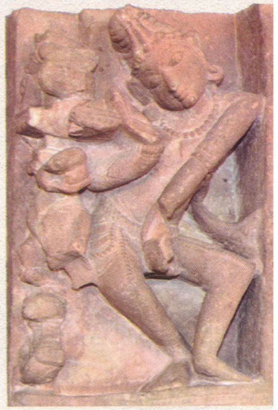

संग्रहालय के मुख्य भवन में एक आयताकार कक्ष हैं जिससे एक अन्य कक्ष लगा हुआ हैं तथा दो बरामदे, एक आगे तथा एक पीछे हैं। इन्हीं कक्षों तथा बरामदों को क्रमशः वीथिका क्रमांक 1,2,4 तथा 3 संख्या दी गयी हैं। इन वीथिकाओं में प्रदर्शित तथा सुरक्षित मूर्तियाँ ग्वालियर तथा उसके आसपास के ऐतिहासिक स्थलों अमरोल (जिला ग्वालियर), खेराट (जिला भिण्ड), नरेसर, बटेसर, मितावली, पढ़ावली, सिहोंनिया (जिला मुरैना), तेरही तथा सुरवाया (जिला शिवपुरी) आदि से प्राप्त हैं। ये प्रतिमाएँ प्रथम शताब्दी ई. पू. से 17 वीं शताब्दी ई. तक की कला परम्परा एवं तकनीक का प्रतिनिधित्व करती हैं। कुतवार (मुरैना) में हुए उत्खनन से प्राप्त पुरानिधियों का संकलन भी संग्रहालय में किया गया हैं जिनकी तिथि 11 वीं शताब्दी ई.पू. से 9 वीं शताब्दी ई. तक हैं। इन पुरानिधियों में रजत के कर्णाभूषण, ताम्र की अंगूठी, चूड़ियाँ, सुरमा लगाने की सलाइयाँ, पकी मिट्टी से बनी मूर्तियाँ, मुहर की छाप व मनके आदि हैं। इनका प्रर्दशन संग्रहालय की वीथिका स. 2 में किया गया हैं।

खुदाई से प्राप्त मृद्भाण्डों में चित्रित धूसर मृद्भाण्ड (P.G.W.) तथा उत्तरी काली चमकीली मृद्भाण्ड परंपरा (N.B.P.W) के टुकड़े तथा लाल रंग के मिट्टी के पात्र प्रदर्शित हैं। संग्रहालय में प्राचीन लौह उपकरणों को भी प्रदर्शित किया गया हैं, जिनका उपयोग मुख्य रूप से युद्धकार्य में किया जाता था। इसमें तलवार के हत्थे, कील, घोड़े की नाल, छैनी, तोप के गोले आदि प्रमुख हैं। वीथिका मे प्रदर्शित घोड़े की नाल का वर्तमान परिपेक्ष में तुलनात्मक अध्ययन करें तो हम पाएंगे की प्राचीन नाल का आकार वर्तमान